शिवलिंग पूजन एवं महत्व

पौराणिक कथाएं व्रत सहित

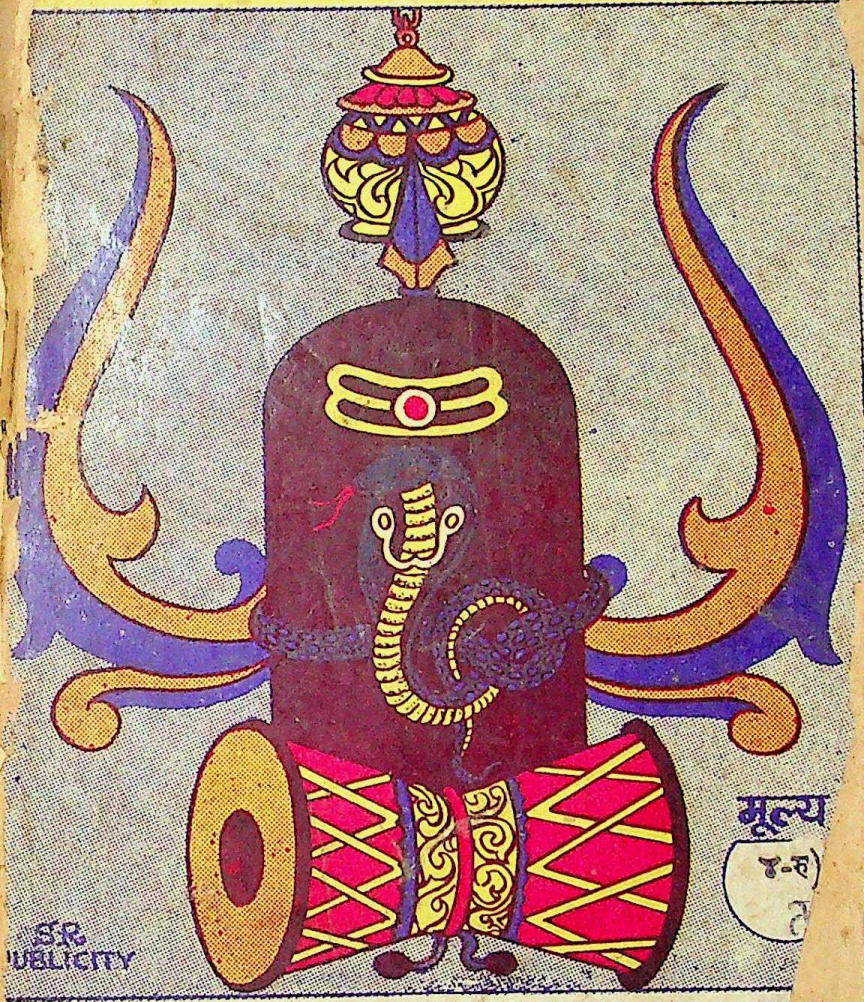

मूल्य
४-६)

S.R
PUBLICITY

हमारे यहां मिलने वाली धार्मिक पुस्तकें

घर बैठे वी०पी०पी० द्वारा मंगाइये

व्रत और त्यौहार	८)	देवी भागवतपुराण भाषा	२५)
एकादशी महात्म	४)	रामायाण बड़ी भा०टी०	४५)
माघ	४)	सुखसागर बड़ा भाषा	४५)
कार्तिक	४)	शिवपुराण	४५)
बैशाख	४)	महाभारत	३५)
श्रावण	४)	योगवशिष्ट २ भाग भाषा	१०१)
भागवद्गीता भा०टी०	१०)	दुर्गासप्तशती भाषा	१०)
माता की भेंट	३)	सप्तवार व्रतकथा	३)
भजन लहरी	३)	सोमवार ,,	१)
सुखमनी साहब	२५)	मंगलवार ,,	१)
अमर कथा	२)	बुधवार ,,	१)
भक्ती ज्ञान वैराग्य	६)	बृहस्पतिवार ,,	१)
चाणक्य नीति	२)	शुक्रवार ,,	१)
रुद्राक्ष महात्म	२)	शनिवार ,,	१)
रत्न परिचय	२)	रविवार ,,	१)
संध्या गायत्री	२)	चालीसा संग्रह	३)
शिवस्तुती	२)	सत्यनारायण कथा	२)
दुर्गा स्तुति	४)	शंकर भजन माला	४)

एवं हर प्रकार की धार्मिक सामाजिक टैक्निकल पुस्तकें मिलने का एक मात्र स्थान :—

अर्जुनसिंह बुकसेलर बड़ा बाजार, हरिद्वार

शिवलिंग पूजन एवं महत्व

संग्रह कर्त्ता—

बी० एस० अरोड़ा

मूल्य ४)

प्रकाशक:—

अर्जुनसिंह बुकसेलर बड़ा बाजार, हरिद्वार

शिवलिंग की पौराणिक कथा

शिवलिंग के पूजन के प्रारम्भ होने के सम्बन्ध में पौराणिक कथा है कि—दक्ष प्रजापति ने अपने यज्ञ में शिवजी का भाग नहीं रक्खा, जिससे कुपित होकर सती पार्वती ने दक्ष के यज्ञ मण्डप में योगाग्नि द्वारा अपना शरीर जला कर प्राण त्याग कर दिया। सती के शरीर के त्याग को जान कर शिवजी अत्यन्त क्रुद्ध हो गये और वे नग्न होकर पृथ्वी में भ्रमण करने लगे। एक दिन वह नग्नावस्था में ही ब्राह्मणों की बस्ती में पहुंच गये। शिवजी के नग्न-स्वरूप को देखकर ब्राह्मणों की स्त्रियां उन पर मोहित हो गई। स्त्रियों की मोहावस्था देखकर ब्राह्मणों ने शिवजी को शाप दिया कि 'इनका लिंग इनके शरीर से तत्काल गिर जाये।' ब्राह्मणों के शाप के प्रभाव से शिवजी का लिंग उनके शरीर से अलग होकर गिर गया, जिससे तीनों लोकों में घोर उत्पात होने लगा। समस्त देव, ऋषि, मुनि व्याकुल होकर ब्रह्माजी की

शरण में गये । ब्रह्मा ने योगबल से शिव-लिंग के अलग होने का कारण जान लिया और वह समस्त देवताओं, ऋषियों और मुनियो को अपने साथ लेकर शिवजी के पास पहुंचे। ब्रह्माजी ने शिव से प्रार्थना की कि--'आप अपने लिंग को पुनः धारण कीजिये, अन्यथा तीनों लोक नष्ट हो जायेंगे ।' ब्रह्माजी की प्रार्थना सुनकर शिवजी बोले--'आज से सभी लोग मेरे लिंग की पूजा प्रारम्भ कर दें । तो मैं पुनः अपने लिंग को धारण कर लूंगा ।' शिवजी की बात सुन कर ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम सुवर्ण का शिवलिंग बनाकर उसका पूजन किया । पश्चात देवताओं, ऋषियों और मुनियों ने अनेक द्रव्यों के शिवलिंग बना कर पूजन किया । तभी से शिवलिंग के पूजन का प्रारम्भ हुआ ।

जो मनुष्य किसी तीर्थ में तीर्थ की मृत्तिका से शिवलिंग बनाकर उनका हजार बार अथवा लाख बार अथवा करोड़ बार सविधि पूजन करता है, वह विश्वस्वरूप हो जाता है, जो मनुष्य तीर्थ में मिट्टी, भस्म, गोबर अथवा बालू का शिवलिंग बना कर एक बार भी उसका सविधि पूजन करता है । वह दस हजार कल्प तक स्वर्ग में निवास करता है ।

शिवलिंग का सविधि पूजन करने से मनुष्य सन्तान, धन, धान्य, विद्या, ज्ञान, सद्बुद्धि, दीर्घायु और मोक्ष की प्राप्ति करता है ।

जिस स्थान पर शिवलिंग का पूजन होता है, वह तीर्थ न होने पर भी तीर्थ बन जाता है । जिस स्थान पर सर्वदा शिवलिंग का पूजन होता है, उस स्थान पर जिस मनुष्य की मृत्यु होती है, वह शिव लोक को प्राप्त करता है । जो मनुष्य 'शिव, शिव, शिव' इस प्रकार सर्वदा कहता रहता है, वह परम पवित्र और परम श्रेष्ठ हो जाता है और वह धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति करता है । 'शिव' शब्द के उच्चारण मात्र से मनुष्य के समस्त प्रकार के पापों का नाश हो जाता है । अतः जो मनुष्य 'शिव, शिव' का उच्चारण करते हुये प्राणत्याग करता है, वह अपने करोड़ों जन्म के पापों से मुक्त होकर 'शिवलोक' को प्राप्त करता है ।

'शिव' शब्द का अर्थ है 'कल्याण' है । अतः जिसकी जिह्वा पर अहर्निश कल्याणप्रद शिव का नाम रहता है, उसका बाह्य और अभ्यन्तर शुद्ध हो जाता है और वह शिवसायुज्य प्राप्त करता है ।

'शिव' यह दो अक्षरों वाला नाम ही परमब्रह्म-स्वरूप एवं तारक है, इससे भिन्न और कोई दूसरा तारक ब्रह्म नहीं है--

तारकं ब्रह्म परमं शिव इत्यक्षरद्वयम् ।
नैतस्मादपरं किंचित तारकं ब्रह्म सर्वथा ।।

—००—

शिवलिंग पूजन

साधक को चाहिये कि, वह प्रातःकालीन नित्य-क्रिया से निवृत्त हो, पूजा स्थान में जाकर, कुशासन पर बैठ, आचमन, प्राणायाम करने के पश्चात घी का दीप जलाकर, 'सो३म् दीं दीपनाथाय नमः' पढ़कर दीपक का पूजन करके बायें हाथ में सरसों लेकर चारों दिशाओं मे 'ओ३म् अपक्रामन्तु भूतानि०' यह यह मन्त्र पढ़कर, सरसों छोड़कर पूजन आरम्भ करे ।

।। ध्यानम् ।।

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्ग परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।

पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणे र्यधिकृत्ति गसान
विश्वाद्यंविश्वबीजं निखिल-भयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम्।।१।।
बन्धूकसन्निभं देवं त्रिनेत्रं चन्द्रशेखरम् ।
त्रिशूलधारिणं देवं चारुहासं सुनिर्मलम् ।।२।।
कपालधारिणं देवं वरदाभय-हस्तकम्
उमया सहितं शम्भुं ध्यायेत् सोमेश्वरं सदा ।।३।।

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, ध्यानं समर्पयामि ।

ध्यान—हाथ में पुष्प लेकर 'ध्यायेन्नित्यं महेश०' से ध्यामं समर्पयामि' तक पढ़कर भगवान शंकर का ध्यान करें ।

ध्यान का अर्थ—रजत-पर्वत (कैलाश पर्वत) के समान सुभ्रवर्ण वाले, सुन्दर चन्द्र-किरणों के युक्त, देदीप्यमान रत्नों के समान सुभ्रवर्ण-वाले, परशू (फरसा), मृग हाथ में धारण किये हुये, अभय मुद्रा युक्त, प्रसन्न, कमल के आसन पर आसीन (बैठे हुये) समस्त देवगणों से स्तुति किये गये, विश्व के आद्य एवं बीजरूप, अपने भक्तजनों के समस्त भयविनाशक, पंचमुख, त्रिनेत्रधारी ऐसे भगवान शिव का निरन्तर ध्यान करे ।।१।।

बन्धूक (गुलदुपहरिया) पुष्प के समान श्वेत वर्ण वाले, त्रिनेत्र, भाल स्थल में चन्द्रमायुक्त, त्रिशूलधारी, मन्दहास्य युक्त, अत्यन्त स्वच्छ, कपाल (बरमुण्ड) धारी, अभय हस्त मुद्रा वाले, ऐसे उमा के सहित सोमेश्वर भगवान् शंकर का निरंतर ध्यान करे ॥ २-३ ॥

आवाहनम्-आयाहि भगवन् शम्भो ! शर्व त्वं गिरिजापते ।
प्रसन्नो भव देवेश ! नमस्तुभ्यं हि शङ्कर ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, आवाहनं समर्पयामि ।

आवाहन—'आयाहि भगवन् शम्भो !०' से 'आवाहनं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर भगवान् शिव पर एक आचमनी जल चढ़ावे ।

आसनम्—विश्वेश्वर महादेव राजराजेश्वरप्रिय ! ।
आसनं दिव्यमीशान दास्येऽहं तुभ्यमीश्वर ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, आसनं समर्पयामि ।

आसन—'विश्वेश्वर महादेव०' से 'आसनं समर्पयामि' तक पढ़कर साम्बसदाशिव को आसन प्रदान करे ।

पाद्यम्—महादेव महेशान महादेव परात्पर ! ।
पाद्यं गृहाण मद्दत्तं पार्वतीसहितेम्बर ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, पाद्यं समर्पयामि ।

पाद्य (जल)—'महादेव महेशान०' से लेकर 'पाद्य' समर्पयामि' तक पढ़कर जल प्रदान करे ।

अर्घ्यम्—त्र्यम्बकेश सदाचार जगदादि विधायक ! ।
अर्घ्यं गृहाण देवेश साम्ब सर्वार्थदायक ! ॥

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब-सदाशिवाय नमः, अर्घ्यं समर्पयामि ।

अर्घ्य—'त्र्यम्बकेश सदाचार०' से 'अर्घ्यं समर्पयामि' तक पढ़कर अर्घ्य देवे ।

आचमनीयम्-त्रिपुरान्तक दीनार्त्तिनाशक श्रीकण्ठ शाश्वत ।
गृहाणाचमनीयं च पवित्रोदक-कल्पितम् ॥

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, आचमनीयं समर्पयामि ।

आचमनीय—त्रिपुरान्तक दीनार्तिनाशक०' से 'आचमनीयं समर्पयामि' तक कह कर एक आचमनी जल गिरादे ।

गोदुग्धस्नानम्-मधुरं गोपयः पुण्यं पटपूतं पुरुस्कृतम् ॥
स्नानार्थं देवदेवेश गृहाण परमेश्वर ! ॥

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, गोदुग्धास्नानं समर्पयामि ।

दुग्धस्नान—'मधुरं गोपायः पुर्ण्य०' से गोदुग्ध-स्नानं समर्पयामि' तक पढ़ कर भगवान् शंकर को गौ के दुग्ध से स्नान करावे ।

दधिस्नानम्-दुर्लभं दिवि सुस्वादु दधि सर्वप्रियं परम् ।
पुष्टिदं पार्वतीनाथ ! स्नानाय प्रतिगृह्यताम् ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, दधिस्नानं समर्पयामि ।

दधिस्नान—'दुर्लभं दिवि सुस्वादु०' से 'दधि-स्नानं समर्पयामि' तक उच्चारण कर दही से स्नान कराये ।

घृतस्नानम्—घृतं गव्यं शुचि स्निग्धं सुसेव्यं पुष्टिमिच्छताम् ।
गृहाण गिरिजानाथ स्नानाय चन्द्रशेखर ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिव नमः, घृतस्नानं समर्पयामि ।

घृतस्नान—'घृतं गव्यं शुचि स्निग्धं०' से 'घृत-स्नानं समर्पयामि' तक पढ़ कर शंकर को घृत से स्नान करावे ।

मधुस्नानम्–मधुरं मृदु मोहघ्नं स्वरभङ्गविनाशनम् ।
महादेवेदमुत्सृष्टं तव स्नानाय शङ्कर ! ॥

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, मधुस्नानं समर्पयामि ।

मधुस्नान—'मधुरं मृदु मोहघ्नं०' से 'मधुस्नानं समर्पयामी' तक पढ़कर मधु (शहद) से स्नान करावे ।

शर्करास्नानम्-तापशान्तिकरी शीता मधुरास्वादसंयुता ।
स्नानार्थं देवदेवेश! शर्करेयं प्रदीयते ॥

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, शर्करास्नानं समर्पयामि ।

शर्करास्नान—'तापशान्तिकरी शीता०' से 'शर्करास्नानं समर्पयामि' पर्यन्त पढ़कर भगवान् शिव को शर्करा (चीनी) से स्नान करावे ।

शुद्धोदकस्नानम्-गंगागोदावरी रेवापयोष्णी यमुना तथा
सरस्वत्यादि तीर्थानि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय

सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

शुद्धोदकस्नान—'गङ्गा गोदावरी रेवा०' से 'शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि' तक कह कर भगवान् सदा शिव को शुद्ध जल से स्नान करावे ।

वस्त्रम्—वस्त्राणि पट्टकूलानि विचित्राणि नवानि च ।
मयाऽऽनीतानि देवेश ! प्रसन्नो भव शङ्कर! ।।

साङ्गाय स-परिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साऽम्ब-सदाशिवाय नमः,वस्त्रं समर्पयामि ।

वस्त्र—'वस्त्राणि पट्टकूलानि०' से 'वस्त्रं समर्पयामी' तक कहकर शंकर को वस्त्र चढ़ावे ।

यज्ञोपवीतम्—सौवर्ण राजतं त्रामं कार्पासस्य तथैव च ।
उपवीतं मया दत्तं प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्याताम् ।।

साङ्गाय स-परिवाराय शायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाल साम्ब-सदाशिवाय नमः, यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।

यज्ञोपवीत—'सौवर्ण राजत ताम्रं०' से 'यज्ञोपवीतं समर्पयामि' पर्यन्त उच्चारण कर शिव को

यज्ञोपवीत (जनेऊ) धारण करावे ।

गन्धम्—सर्वेश्वर जगद्वन्द्य दिव्यासन-समास्थिति ।
गन्धं गृहाण देवेश ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, गन्धं समर्पयामि कहकर साम्ब सदाशिव को सुगन्धित केसरिया चन्दन लगावे ।

अक्षतान् (गन्धोपरि शुक्लाक्षतान्)

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठाः शुभ्रा धूताश्च निर्मलाः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब सदाशिवाय नमः, अक्षतान् समर्पयामि पढ़ कर भगवान शङ्कर को अक्षत चढ़ावें ।

पुष्पाणि-माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वैप्रभो! ।
मयाऽऽहृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्ब—सदाशिवाय नमः, पुष्पाणि समर्पयामि कह कर भगवान शङ्कर को सुगन्धित पुष्प एवं

माला चढ़ावें ।

बिल्वपत्राणि–विल्वपत्रं सुवर्णेन त्रिशूलाकारमेव च ।
मयार्ऽर्पितं महादेव! बिल्वबत्रं गृहाण मे ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, विल्वपत्राणि समर्पयामि पर्यन्त पढ़कर बिल्वपत्र चढ़ावें ।

धूपम्–वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावराणाय साम्बसदाशिवाय नमः, धूपं समर्पयामि पढ़कर सुगन्धित धूप जलावे ।

दीपम्–आज्यात्त-वर्त्तिसंयुक्तं वह्निना दीपितं तु यत् ।
दीपं गृहाण देवेश ! त्रैलोक्यतिमिरपाह ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, दीपं समर्पयामि कहकर भगवान शङ्कर के आगे दीप जलावे ।

नैवेद्यम्–अपूपानि च पक्कानि मण्डका वटकानि च ।
पायसं सूपमन्नं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, नैवेद्यं निवेदयामि पढ़कर भगवान साम्बसदाशिव को नैवेद्य निवेदन करे ।

आचमनीयम्—पानीयं शीतलं शुद्धं गांगेयं महदुत्तमम् ।
गृहाण पार्वतीनाथ! तव प्रीत्या प्रकल्पितम् ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, आचमनीयं समर्पयामि पढ़कर एक आचमनी जल गिरा दे ।

करोद्वर्त्तनम्-कर्पूरादीनि द्रव्याणि सुगन्धीनि महेश्वर! ।
गृहाण जगतां नाथ ! करोद्वर्त्तनहेतवे ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, करोद्वर्त्तनं समर्पयामि पढ़कर गन्ध छिड़के ।

फलानि—कूष्माण्डं मातुलिगं च नारिकेलफलानि च ।
गृहाण पार्वतीकान्त सोमशेखर शङ्कर ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, फलानि समर्पयामी

तक उच्चारण कर भूत भावन भगवान शङ्कर को अनेक प्रकार के फल चढ़ावे ।

स-पूगीफल-ताम्बूलादीनि

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।
गृहाण देवदेवेश द्राक्षादीनि सुरेश्वर ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, स-पूगीफल-ताम्बूलादीनि समर्पयामि पढ़कर भगवान शङ्कर को पान, इलायची, लौंग, सुपारी आदि चढ़ावे ।

द्रव्यम्—हिरण्यगर्भ-गर्भस्थं हेमबीज-समन्वितम् ।
पञ्चरत्नं मया दत्तं गृह्यतां वृषभध्वज ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, द्रव्यं समर्पयामि कह कर द्रव्य-दक्षिणा समर्पित करे ।

नीराजनम्—

अग्निर्ज्योती रविर्ज्योति-र्ज्योतिर्नारायणो विभुः ।
नीराजयामि देवेश पञ्चदीपैः सुरेश्वरः ! ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय

सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, कर्पूर-नीराजनं समर्पयामि पढ़कर कपूर की आरती करे ।

पुष्पाञ्जलिः-हर विश्वाखिलाधार निराधार निराश्रय! ।
पुष्पाञ्जलिं गृहाणेश सोमेश्वर! नमोऽस्तु ते ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि पढ़कर भगवान शिव को पुष्पाञ्जलि प्रदान करे ।

प्रार्थना–हेतवे जगतामेव संसारार्णवसेतवे ।
प्रभवे सर्वविद्यानां शम्भवे गुरवे नमः ॥

साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय स-शक्तिकाय सावरणाय साम्बसदाशिवाय नमः, क्षमा-प्रार्थनां समर्पयामि पढ़कर भगवान साम्बसदाशिव से क्षमा-प्रार्थना करे ।

॥ इति शिव लिंग पूजन समाप्त ॥

भगवान शिव की महत्ता

एक बार ब्रह्मा और विष्णु में परस्पर यह विवाद उठ खड़ा हुआ कि हम दोनों में से कौन श्रेष्ठ है। उसी समय उनके बीच एक ज्योतिर्लिंग का आविर्भाव हुआ। उस ज्योतिपुंज को देखकर ब्रह्मा एवं विष्णु चकित हो गये। तत्पश्चात उन लोगों ने यह निश्चय किया कि हम लोगों में से जो कोई भी इस ज्योतिर्लिंग के आदि-अन्त का पता लगा लेगा वही श्रेष्ठ माना जायेगा। परन्तु उसका विस्तार अनन्त एवं असीम था। सहस्र वर्षों तक अनुसन्धान करते रहने पर भी वह ज्योतिपुंज का पता लगाने में वे दोनों असफल रहे। अन्ततोगत्त्वा विष्णु ने इस बात को स्वीकार कर लिया कि मैं पता लगाने में असमर्थ हूं। परन्तु ब्रह्मा ने मोहग्रस्त होकर झूठ बोलते हुये कहा कि मैंने पता पा लिया है। उन्होंने साक्ष्य के रूप में मिथ्यावादिनी केतकी को उपस्थित कर दिया। उसी समय वहां पर आकाशवाणी हुई कि 'ब्रह्मा और केतकी दोनों ही स सन्दर्भ में झूठ कह रहे हैं।' ऐसा सुनकर ब्रह्मा लज्जित हो गये और भय से कांपने लगे।

ब्रह्मा और विष्णु आकाशवाणी होने के सम्बन्ध में सोच ही रहे थे कि उनके मध्य भगवान् शिव स्वयं ही प्रकट होकर बोले—'हे ब्रह्मा एवं विष्णु ! तुम दोनों आपस में व्यर्थ ही झगड़ रहे हो । क्योंकि इस सृष्टि का मूलभूत उत्पादक स्वामी मैं ही हूं । तुम दोनों की उत्पत्ति भी मेरे ही कारण हुई है । अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और महेश ये तीनों भिन्न-भिन्न मेरे ही स्वरूप हैं । मैंने ही उस ज्योतिर्लिंग को तुम लोगों के आत्मबोध के निमित्त उत्पन्न किया था । मिथ्या भाषण के कारण ब्रह्मा और केतकी को दण्ड का भागी होना पड़ेगा । केतकी को मेरी पूजा में कोई स्थान नहीं मिलेगा और ब्रह्मा को भविष्य में पुनः पश्चाताप करना होगा । इसलिये तुम लोगों को अपने अहंकार का त्याग कर देना चाहिये ।

इतना कहकर शिवजी वहीं अन्तर्धान हो गये । ब्रह्मा को अपनी भूल पर पछतावा होने लगा । अन्त में ब्रह्मा तथा विष्णु दोनों ही भगवान् शिव की स्तुति करने लगे ।

सति-चरित्र

प्राचीन काल में एक बार पार्वती जी दक्ष प्रजापति की पुत्री के रूप में अवतरित हुई थीं। उस समय पार्वतीजी का नाम सती था और उनका विवाह कैलाशवासी भगवान् शिव से हुआ था। एक बार अपने श्वसुर दक्ष को शिवजी ने प्रणाम नहीं किया जिसके फलस्वरूप वे उनसे अत्यधिक रुष्ट हो गये थे। कालान्तर में दक्ष प्रजापति मे एक बार कनखल (हरिद्वार) तीर्थ में एक महायज्ञ का आयोजन किया और उस यज्ञ में उन्होंने अपनी कन्या सती एवं जामाता शिव को निमन्त्रण नहीं भेजा।

सती को जब यह बात मालूम हुई कि उनके पिता ने शिव के अपमान के निमित्त उन्हें नहीं बुलाया तो वे स्वयं ही पितृगृह में जा पहुंची और वहां क्रोधावेश में उन्होंने यज्ञ-कुण्ड में अपने प्राणों की आहुति दे डाली।

सती के प्राण त्यागते ही शिव के गणों ने यज्ञ को ध्वंस कर दिया। समाचार मिलने पर अपने गणों के

रक्षार्थ शिवजी ने वीरभद्र को भेजा। वीरभद्र ने सभी लोगों का संहार कर डाला। अन्त में देवों की स्तुति से वे शान्त हुए और यज्ञ को पूर्ण कराया। इस कथा का उल्लेख राम-चरित-मानस में इस प्रकार किया गया है—

'पिता भवन जब गयेउ भवानी।
दच्छ त्रास काहु न सनमानी॥
दच्छ न कछु पूछी कुसलाता।
सति हि विलोकि जरे सब गाता॥
समुझि सो सति हि भयउ अति क्रोधा।
बहुविधि जननी कीन्ह प्रबोधा॥
सुनहु सभासद सकल मुनिन्दा।
कही सुनी जिन्ह संकर निन्दा॥
सो फल तुरत लहब सब काहू।
भलीभांति पछिताब पिता हू॥
अस कहि जोग अगिनि तनु जारा।
भयउ सकल मख हाहाकारा॥
तेहि कारन हिमगिरि गृह जाई।
जनमी पारवती तनु पाई॥'

—(बालकाण्ड)

सती के प्राण त्यागने बाद उनका हिमाचल के घर में पुनर्जन्म हुआ। वहां भी उनका विवाह शिव जी के साथ ही सम्पन्न हुआ। शिव-पार्वती के पुत्र रूप में जन्म लेकर स्वामी कार्तिकेय ने तारकासुर नामक अजेय राक्षस का वध किया। श्रीरामचरित-मानस में तुलसीदासजी ने भी इसकी पुष्टि की है—

'तब जनमे षटबदन कुमारा।
तार असुर समर जिन मारा ॥'

—(बालकाण्ड)

—०—

शक्ति पीठ

सती के शव को लेकर भगवान् शिव ने जब ताण्डव नृत्य किया तो विष्णु ने अपने सुदर्शन चक्र के द्वारा सती-देह को कई टुकड़ों में विभक्त कर दिया था। वे टुकड़े जिन जिन स्थानों में गिरे वे स्थान शक्तिपीठ के नाम से प्रसिद्ध हुए। काशी में जहां नेत्र गिरा वह स्थान विशालाक्षी के नाम से तथा जहां

कान की मणि गिरी वह स्थान मणिकर्णिका के नाम से आज भी विख्यात है ।

कामरूप कामाक्षा में सती का जननेन्द्रिय गिरने से वह स्थान प्रधान शक्तिपीठ माना गया है ।

इसी तरह हरिद्वार आदि तीर्थ स्थान भी शक्ति-पीठ के अन्तर्गत माने जाते हैं । ये पीठस्थल तन्त्र मे शक्ति-पूजा के विशिष्ट स्थान कहे गये हैं । इन स्थानों में तान्त्रिकों को उनकी क्रिया में शीघ्र ही सिद्धि उप-लब्ध होती है अतएव शक्तिपीठ का विशेष महत्त्व है ।

—0—

भस्म, रुद्राक्ष एवं बिल्वपत्र उपासना के साधन

शिवजी की आराधना के निमित्त उपरोक्त तीन वस्तुओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है । शरीर पर भस्म लेपन, रुद्राक्ष गले में धारण एवं बिल्वपत्र का अर्पण किया जाता है । इनके अतिरिक्त धतूरे के फल चढ़ाने

का भी विशेष माहात्म्य है ।

देश के विभिन्न स्थानों पर शिवजी के द्वादश लिंग स्थापित हैं, जो ये हैं—

सोमनाथ, महाकाल, विश्वेश्वर, मल्लिकार्जुन, ओंकार, केदार, भीमशंकर, त्र्यम्बक, वैद्यनाथ, नागेश्वर, रामेश्वर, घृणेश्वर—ये १२ ज्योतिर्लिंग है । इनके दर्शन एवं पूजन से सम्पूर्ण पापों का क्षय हो जाता है ।

काशी-स्थित बयालीस लिंगों की परिक्रमा एवं पूजन का विशेष महत्त्व है । —(काशीखण्ड)

शिवरात्रि व्रत

प्रत्येक मास की कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तिथि को शिवजी के व्रत का विधान है । परन्तु फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी का दिन परम पुण्य दायक माना गया है । इसी पुनीत तिथि को धर्मप्राण जनता 'महाशिवरात्रि' के नाम से सम्बोधित करती है । इस तिथि को व्रत एवं उपासना करने वाला प्राणी शिव का समीप्य प्राप्त करता है तथा अक्षय पुण्य का भागी होता है ।

महामृत्युन्जय मन्त्र

शिवजी के मन्त्रों में 'महामृत्युन्जय' मन्त्र का विशिष्ट स्थान है। इसे शिव का अमोघ मन्त्र कहा गया है। इस मन्त्र के प्रभाव से सभी अशुभ स्थान स्थित ग्रहों की शान्ति, सम्पूर्ण शारीरिक व्याधि का शमन एवं आयु की वृद्धि होती है। इस मन्त्र का जापक कभी दुःखी और अल्पायु नहीं होता। वह सदैव स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन प्राप्त करता है।

आशुतोष

भगवान् शिव अपने भक्तों पर शीघ्र ही द्रवित होकर आराधक को इच्छित वर प्रदान करते हैं। इसीलिए शास्त्रों ने भगवान् शिव को 'आशुतोष' की संज्ञा दी है।

भगवान राम द्वारा शिव-गुणगान

भगवान् रामचन्द्रजी ने शिवजी की महिमा का

गुणगान किया है, जिसे तुलसीदास जी ने मानस मे इस प्रकार उद्धृत किया है—

शिवद्रोही मम दास कहावा, सो नर सपनेहुं मोहिं न पावा ।।

इसी प्रकार लंकाधिपति रावण भी शिव का परम भक्त था । शिव भक्ति के कारण ही वह अजेय शक्ति प्राप्त कर राज्य का उपभोग कर रहा था । जैसे—

'सादर शिव कहं सीस चढ़ाए, एक-एक के कोटि पाए।।'

—(रामचरित मानस)

बाणासुर की रक्षा

जिस समय दैत्यराज बाणासुर के साथ भगवान् श्रीकृष्ण का भयंकर युद्ध चल रहा था, उस समय वहां पहुंचकर शिवजी ने बाणासुर की रक्षा की थी, क्योंकि बाणासुर भगवान् शिव का अनन्य भक्त था ।

शिवजी की महिमा तथा लीलायें अपार हैं । उन की महिमा का कोई अन्त नहीं पा सकता । इनकी स्तुति-स्तोत्र, पूजा-पाठ एवं जप-यागादि अनुष्ठान कर के अनेक साधक एवं भक्त-भावुक जन इस लोक में अनन्त सुखोपभोग कर अन्त में शिव-सायुज्य को प्राप्त हुये । अतएव सभी स्त्री-पुरुषों को शिवजी की अर्चना-पूजा करके अक्षय सुख का अधिकारी बनना चाहिए ।

लिंग प्रतिष्ठा विधान

महीने में शुक्ल पक्ष के किसी दिन अपने अनुकूल लिंग का निर्माण करवाना चाहिए। फिर पवित्र स्थान देखकर भूमि की परीक्षा करके समय के अनुकूल उपचार करना चाहिये। फिर गणेश पूजन करके शुद्ध स्नान आदि करके लिंग को स्नान कराने के लिये स्नानालय में ले जाना चाहिये। उसके बाद शिला शास्त्र की मर्यादा से वेद मन्त्रों के साथ लिंग का जल में अधिवास करके मूर्ति को सुन्दर वस्त्राभूषणों से सुसज्जित करके सविधि उनका पूजन करना चाहिये। फिर चौकी पर रख कर शयन कराना चाहिये। पूर्व दिशा में तो मस्तक हो और पश्चिम में पिण्डी रखकर पूजन करना चाहिये। फिर पहले की भांति शोधन करके शयन गृह में ले जाना चाहिये। वहां पर शुद्ध तथा पवित्र जल से स्नान करवाना चाहिये फिर पूजन करना चाहिये। वेदी की भूमि पर ईशान कोण में कमल लिखना चाहिये। शिव कुम्भ में भगवान सदा शिव का आह्वान तथा पूजन करना

चाहिये । वेदी के पश्चिम की ओर चण्डिका कमल लिखना चाहिये और उस पर पुष्प चढ़ाने चाहिये। मांगलीक गीतों द्वारा वहां पर लिंग रखना चाहिये । उसे नये वस्त्रों में लपेटना चाहिये । उसके आगे फिर कमल लिखना चाहिये और उस पर विद्येश कुम्भ की स्थापना करनी चाहिये और उनके मध्य में विधि पूर्वक श्वेत कमल बनाना चाहिये । वहां पर वर्धिनी-शेवी की स्थापना करनी चाहिये । फिर पूर्व आदि दिशाओं में श्राद्ध मूर्तियों की कल्पना करनी चाहिये। उन मूर्तियों के चार ब्राह्मण मन्त्र उच्चारण भी करें एवं हवन भी करें । आचार्य का आसन ईशान या पश्चिम दिशा में होना चाहिये । प्रथम पूर्णाहुति होम करके फिर एक सौ आठ घृत की आहुतियां डालनी चाहिये। आचार्य को मूल मन्त्र के साथ शिवलिंग के मस्तक पर हाथ रखना चाहिये ।

गुरु शिष्य को मिला कर सात द्रव्यों को हवन सामग्री में मिलाकर सौ अथवा पचास आहुतियां हवन कुण्ड में डालनी चाहिये । सब तरह से हवन होने के बाद पूर्णाहुति की योजना करनी चाहिये। फिर महा पूजन आरम्भ करना चाहिये। दस कलशों का पूजन करना चाहिये । शिव कलश के जल में

शिव मन्त्र पढ़कर अंगूठे और अनामिका द्वारा मिट्टी लेकर मन्त्र का जाप करना चाहिये । आचार्य को लिंग के मध्य में विद्या का न्यास करना चाहिये । फिर शिव घट के जल से मूर्ति का पुनः अभिषेक करना चाहिये । आसन की कल्पना करके पंचन्यास कला द्वारा दीप्त मूर्ति का स्मरण करना चाहिये । फिर हाथ जोड़ कर शिव-शिवा को स्तुति के साथ बुलाना चाहिये । आह्वान के बाद उनका पूजन ध्यान करना चाहिये । पंचोपचार से उनका पूजन करना चाहिये । अन्य मूर्तियों का पूजन भी लिंग के पूजन के समान ही करना चाहिये । पंचोपचार से बढ़कर अन्य कोई भी पूजन लिंग की प्रतिष्ठा का नहीं है ।

जल अधिवासन की शय्या पर मूर्तियों को नीचे की ओर मुख करके सुलाना चाहिये साथ ही साधक को अपने अन्तःकरण में उस मूर्ति को स्थापना करना चाहिये । शक्तिशाली मनुष्यो को नवीन मन्दिर बनवा कर उसमें शिव परिवार की स्थापना करनी चाहिये । अन्य देवताओं की स्थापना का विधान भी इसी भांति है । बेर नाम का लिंग लघुकाय होता है । उसका पूजन विधान भी ठीक उसी प्रकार होता है जैसा कि नर्म-

देवेश्वर आदि का होता है । देखिये सब कर्मों के सुसम्पन्न होने के बाद आचार्य ब्रह्मा होय और जपको को यथावत दक्षिणा देनी चाहिये । यजमान को उन को दायें हाथ से दक्षिणा देनी चाहिये । मैंने आपको लिंग प्रतिष्ठा विधान सुना दिया है ।

मनोकामना पूर्ण लिंग पूजन

(विद्यार्थी, धन के इच्छुक, पुत्र के इच्छुक, मोक्ष के इच्छुक, भूमि के इच्छुक, दया के इच्छुक, तीर्थ को मानने वाले को पार्थिव लिंग की पूजा किस प्रकार करनी चाहिये तथा जगत-मयी आठ मूर्तियां और उनका पूजन ।)

सूत जी ने कहा—हे सज्जनों "मैं आपकी इच्छा-नुसार आपके सामने कामना के अनुसार पार्थिव लिंग की संख्या का क्रम से वर्णन करूंगा । ध्यान पूर्वक सुनिये । संख्या निश्चय ही फल की देने वाली है ।

लिंग के आकार के समान ही पृथक-पृथक आवाहन प्रतिष्ठा तथा पूजा को समझना चाहिये। विद्यार्थियों को चाहिये कि वह एक हजार पार्थिव लिंगों का निर्माण करके उनका पूजन करें। ऐसा करने से उन का मनोरथ अवश्यमेव पूर्ण हो जाता है। धन के इच्छुक को पांचसौ पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये। पुत्र की कामना रखने वाले को १५ सौ लिंगों का पूजन करना चाहिये। वस्त्र के इच्छुक को को पांचसौ पार्थिव लिंग निर्माण करके उनका पूजन करना चाहिये। मोक्ष के इच्छुक को एक करोड़ पार्थिव लिंग निर्माण करके उनका पूजन करना चाहिये। भूमि के इच्छुक को एक हजार पार्थिव लिंग बनाकर उना पूजन करना चाहिये। दया के इच्छुक तीन हजार की संख्या में शिव लिंग निर्माण करके उनका पूजन करना चाहिये। तीर्थ यात्रा के इच्छुक को तीन हजार पार्थिव लिंग बनाकर उनका पूजन करना चाहिये। मित्रों के इच्छुक व्यक्ति को तीन हजार पार्थिव लिंग का पूजन करना चाहिये। किसी को वश में करने के इच्छुक को आठ सौ पार्थिव लिंग बनवाकर उनका पूजन करना चाहिये। पारण के इच्छुक को सात सौ पार्थिव लिंगों का पूजन करना

चाहिये। मोहन के इच्छुक को आठ सौ लिंगों का पूजन करना चाहिये। उच्चाटन के इच्छुक को एक हजार पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये। स्तम्भन के इच्छुक को एक हजार पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये। द्वेष की भावना के इच्छुक को पांच सौ पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये। कारागार से मुक्ति के इच्छुक को २५ सौ लिंगों का पूजन करना चाहिये। राजा से भयभीतों को पांच सौ पार्थिव लिंगों को पूजन करना चाहिये। चोर आदि से भयभीत रहने वालों को दो सौ पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये। डाकिनी आदि राक्षसियों से भयभीत रहने वालों को पांच सौ पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये। दरिद्रता से उन्मुक्त होने वाले को पांच हजार पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये अपनी समस्त इच्छाओं की पूर्ति चाहने वाले को दस हजार पार्थिव लिंगों का पूजन करना चाहिये। इसी प्रकार जिसकी जैसी कामना हो उसके अनुसार वेदोक्त विधि से उतनी उतनी संख्या में पार्थिव लिंग की पूजा करें। पार्थिव लिंग की पूजा करोड़ों यज्ञो का फल देने वाली है तथा कामार्थी व्यक्ति को भुक्ति और मुक्ति देने वाली है। परन्तु जो लिंग का पूजन नहीं

करता उसे आप महान दुर्वृत्त तथा दुरात्मा जानिये । उसको एक दिन अत्यधिक हानि उठानी पड़ती है । वह इस लिये कि एक ओर सब दान, व्रत और तीर्थ हैं और दूसरी ओर केवल लिंग का पूजन है । कलयुग तथा और लोकों में केवल लिंग पूजा को ही श्रेष्ठ कहा गया है । उसक समान दूसरी और कोई पूजा नहीं है । ऐसा ही शास्त्र का कथन है । भुक्ति-मुक्ति-दाता लिंग मनुष्य को अनेक आपत्तियों से बचाता है । लिंग की नित्य पूजा करने वाले शिव भक्त भगवान सदाशिव की सायुज्य मुक्ति के प्राप्त होते हैं । पार्थिव लिंग की पूजा नित्य ही ऋषियों महर्षियों तक को करनी चाहिये । चार अंगुल ऊंचे वेदी से युक्त लिंग को सर्वोत्तम बतलाया गया है । उससे आधे को मध्यम और उससे आधे को अधम कहा गया है । बुद्धिमान तथा विद्वान को चाहिये कि सब कर्म जालों को त्याग कर केवल एक लिंग का पूजन करना चाहिये । अज्ञान रूपी अन्धकार से अन्धे विषयों से फंसे हुए मनुष्य के लिये संसार से तरने के लिये लिंग पूजा के अतिरिक्त दूसरा कोई उपानय हीं है ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा वर्ण संकर सब

को अपने-अपने मन्त्रों द्वारा भगवान सदाशिव की भक्ति करनी चाहिये। यही नहीं, स्त्रियों तथा अन्य जाति के मनुष्यों को भी शिव पूजा का अधिकार है। ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यों को वेद विधि से शिव पूजा का अधिकार है, अन्य को नहीं। महर्षि दधीचि और महर्षि गौतम के शाप से दग्ध चित्त वाले द्विजों के अन्दर वैदिक कर्म के प्रति श्रद्धा उत्पन्न नहीं होती, जोकि श्रोत और स्कार्त विधि का अनादर करके अन्य कर्मों में लग जाते हैं। उन्हें संकल्प का भी फल नहीं प्राप्त होता। उनको चाहिये कि वह उसी स्थान पर त्रिजगन्मयी अष्टमूर्ति का पूजन करे। पृथ्वी, जल, अग्नि वायु, आकाश, चन्द्रमा और यजमान यह आठ मूर्तियां पूज्य हैं। शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, ईश्वर, महादेव, पशुपति इनकी मूर्ति द्वारा पूजा करनी चाहिये। देवकर्म रात्रि में सदा उत्तर मुख होकर करें। इसी प्रकार पवित्र होकर उत्तर की ओर मुख करके भगवान सदाशिव का पूजन करें। भगवान सदाशिव के आगे पर्व मैंने बैठे इसी तरह भगवान सदाशिव तथा शक्ति के साथ उत्तर को भी बैठे। विद्वन कभी भी भस्म रुद्राक्ष की माला और बेलपत्र के बिना भगवान सदाशिव

का पूजन न करे । यदि सदाशिव के पूजन के लिये भस्म प्राप्त न हो सके तो मिट्टी से ही माथे पर त्रिपुण्ड लगा लेना चाहिये ।

भस्म व त्रिपुण्ड महिमा

(भस्म महिमा श्रेष्ठ मुनियों तथा ब्राह्मणों द्वारा कहे गये मन्त्रों से उनके धारण करने की विधि । भस्म व त्रिपुण्ड धारण करने का फल । भस्म त्रिपुण्ड न करने वालों को क्या दण्ड मिलता है और धारण करने वालों को कौन सा सुख प्राप्त होता है, इसका विस्तार पूर्वक वर्णन ।)

सब मंगलों को देने वाली भस्म दो प्रकार की हैं । एक महा भस्म दूसरी स्वल्प भस्म । महा भस्म तो कई प्रकार की है । श्रौत, स्मार्त तथा लौकिक तीन प्रकार की महा भस्म है । स्वल्प संज्ञक भस्म भी नाना प्रकार की है--श्रौत तथा स्मार्त भस्म ब्राह्मणों के लिये है दूसरों सबके लिये लौकिक भस्म है । मुनियों तथा ब्राह्मणों को मन्त्रों द्वारा भस्म धारण करना चाहिये, अन्य बिना मन्त्र के धारण कर सकते

हैं। उपलों को जलाकर जो भस्म बनती है उसे आग्नेय भस्म कहते हैं। त्रिपुण्ड तिलक के लिये उसे द्रव्य भी कहा जाता है। अतएव विद्वानों को चाहिये कि हवन की भस्म का संग्रह करें। अन्य यज्ञों से उत्पन्न भस्म भी त्रिपुण्ड धारने में श्रेष्ठ है। जाबाल के उपनिषद् के अनुसार अग्नि आदि मन्त्रों के द्वारा सात बार जल से भिगोकर भस्म को शरीर से लगाना चाहिये। तीनों संध्याओं में जो मनुष्य शिव भस्म से त्रिपुण्ड लगाता है, वह सब प्रकार के पापों से मुक्त होकर शिव लोक को प्राप्त होता है। जो श्वेत भस्म से त्रिपुण्ड धारण करता है, वह अनादि भूत लोगों में अमृत है। मनुष्य को चाहिये कि त्रिपुण्ड तथा भस्म गलाकर ही यथाविधि जप करे। निर्दयी अधर्मी, सर्वथा पापी हत्यारा, मूर्ख, पतित भी भस्म धारने से जिस देश में भी रहे वहां सब तीर्थ निवास करते हैं तथा वहाँ पर यज्ञों का वास होता है।

देव तथा दैत्य सभी त्रिपुण्ड धारी का सम्मान करते हैं चाहे वह पापी ही क्यों न हो। यह तो रही पापियों की बात। श्रद्धा से त्रिपुण्ड धारण करने वाले का तो क्या ही कहना है? इस सम्बन्ध में अधिक

क्या कहूं । सदा भस्म धारण करें । लिंग का पूजन करें । और षडक्षर मन्त्र का जाप करें । ब्रह्मा, विष्णु रुद्र देवता तथा ऋषि-मुनि भी भस्म धारण के महात्म्य का वर्णन नहीं कर सकते । वह मनुष्य जिसने कि अपने वर्ण के सब आचार विचार का त्याग कर दिया हो यदि वह भी एक बार त्रिपुण्ड धारण कर लें तो उसके भी समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं । वह मनुष्य जो बिना त्रिपुण्ड धारण करके अपना कार्य करते है उनको जन्म जन्मान्तर तक मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती । बस, वह संसार के बन्धनों में ही बन्धे रहते हैं । त्रिपुण्ड धारी ब्राह्मण ही शास्त्रों का अध्येता तथा सभी के अनुष्ठानों को करने वाला है । वह लोग जो त्रिपुण्ड को देख कर ईर्ष्या करते हैं या हंसी उड़ाते हैं वह चाण्डाल के यहां जन्म पाते हैं । ब्राह्मण व क्षत्रिय को चाहिये कि अपने शरीरों पर 'मानस्तोकेन' इस मन्त्र से भस्म धारण करें । वैश्य 'त्रयम्बक' इस मन्त्र से भस्म धारण करें । शूद्रों को चाहिये 'नमः शिवाय' पंचाक्षर मन्त्र से भस्म धारण करना चाहिये । अन्य जाति वालों के लिये तथा विधवा स्त्रियों को शूद्र के समान ही भस्म धारण करना चाहिये । गृहस्थ को ब्रह्मादि पंच मन्त्रों द्वारा

ब्रह्मचारी को त्रयम्बक मन्त्र द्वारा, वानप्रस्थ को अघोर मन्त्र के द्वारा और यति को प्रणव मन्त्र के द्वारा त्रिपुण्ड और भस्म लेपन करना चाहिये । अतिवर्णाश्रमी 'मैं शिव हूं' 'मैं शिव हूं' इस भावना के साथ और योगी ईशान मन्त्र के त्रिपुण्ड और भस्म धारण करे। हे मुनियों ! चारो वर्णों को भस्म धारण करनी चाहिये और अन्य जीवों को भी ।

भगवान शंकर का कहना है कि गृहस्थ, उदासीन, सन्यासी, ब्रह्मचारी और वर्ण शंकर सब बिना भस्म और रुद्राक्ष धारण करने के अन्न जल ग्रहण न करें। यदि वह ऐसा न करेंगे तो पाप के भागी होंगे तथा नरक में डाले जायेंगे। शिव यज्ञ में तान्त्रिक मनुष्य ऊर्ध्व पुण्ड धारी शंख चक्र चिन्हित मनुष्य भाग नहीं ले सकते सब प्रकार की हत्याओं के पाप, आयोग्य स्त्रियों के साथ रमण करने का पाप, झूठी गवाही देने का पाप, निन्दा करने से लगने वाला पाप, यह सब शरीर पर भस्म तथा माथे पर त्रिपुण्ड धारण करने से नष्ट हो जाते हैं ।

हे मुनिश्वरो ! आपको मैंने त्रिपुण्ड का माहात्म्य सुना दिया है । अब मैं इसके धारण करने का विधान

कहूंगा ध्यान पूर्वक सुनिये—मध्यमा तथा अनामिका उंगुली में भस्म लेकर भृकुटि के मध्य से लेकर अन्त तक जितना विस्तार है वहां तक तीन लकीरों वाला त्रिपुण्ड तिलक मस्तक तथा अन्य अंगों पर धारण करना चाहिये। त्रिपुण्ड की एक-एक रेखा के नौ नौ देवता माने गये हैं। वह इस प्रकार की पहली रेखा में ग्रार्हपत्य अग्नि पृथ्वी धर्म रजोगुण ऋग्देव क्रिया शक्ति एवं प्रातः सेवन इत्यादि नौ हैं। दूसरी रेखा के उकार दक्षिण अग्नि आकाश तत्व यजुर्वेद आत्मा अन्तरात्मा इच्छा शक्ति मध्यन्दिन सेवन एवं महेश्वर इस प्रकार नौ देवता हैं। तीसरी रेखा के मकार आह्वनीय अग्नि परमात्मा तमोगुण दिवासाम देव, ज्ञान शक्ति, सायं सेवन एवं महादेव इस प्रकार नौ देवता हैं। हे ऋषियों ! प्रत्येक रेखा को लगाते समय उसके देवताओं का ध्यान एवं स्मरण आवश्यक है। जिससे कि भक्ति, मुक्ति सहज प्राप्त होती है। भस्म वत्तीस सोलह आठ या पांच अंगों पर धारण करनी चाहिये। सिर, माथा, दोनों कान, नेत्र, नासिका, के दोनों ओर, दोनों हाथ, मुंह, कंठ, दोनों कुहनी दोनों मणिबंध, हृदय दोनों बगल, टूंडो, दो अण्ड कोष, दोनों अरू, दोनों घौंटू, दोनों पिन्नी, दोनों जाघें,

दोनों पांव आदि बत्तीस में क्रमशः अग्नि, पृथ्वी वायु, देश दस दिशायें, दस दिग्पाल, आठों वस्त्रधरा, ध्रुव सोम और प्रत्यूज इत्यादि का, लेकर त्रिपुण्ड लगावें। अथवा सिर, कंठ, मस्तक, दोनों स्कण्ध, दोनों हाथ कुहुनियों, दोनों मणिबन्ध युगल हृदय टूंड़ी, दोनों बगलों एवं इन सोलह अंगों में क्रमशः धारण करे। फिर अश्विनो कुमार, शिव-शक्ति, रुद्र, ईश, नारद, वाम इत्यादि नौ देवताओं के नाम लेकर त्रिपुण्ड लगावे। अथवा सिर, बाल, दोनों कानों, मुख, दोनों हाथों, हृदय टूंड़ी, उरू स्थान, दोनों पिन्नयों एवं दोनों पांवों--इन सोलह अंगों क्रमशः शिव, चन्द्रमा, रुद्र, ब्रह्मा, गणेश, लक्ष्मी, विष्णु, शिव, प्रजापति, नाग कन्या, दोनों ऋषि कुमारों का समुद्र तीर्थ इत्यादि के नाम स्मरण करके त्रिपुण्ड भस्म धारण करे। अथवा माथा, दोनों कानों, दोनो स्कन्ध, छाती टूंड़ी, एवं गुह्य अंग इत्यादि आठों अगो में क्रमशः सप्त ऋषियों ब्राह्मणों का नाम लेकर धारण करे। अथवा माथा, दोनों भुजाओं, छाती, नाभि इत्यादि पांच अंगों में अथवा देश काल अवस्था के अनुसार जैसी भस्म मिले उससे त्रिपुण्ड त्रिनेत्र, तीनों गुणों के कारण एवं ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र की उत्पत्ति करने वाले शिव का स्मरण

करके 'नमः शिवाय' इस मन्त्र से माथे पर त्रिपुण्ड धारण करे। शिव और शक्ति को प्रणाम करके दोनों बगलों में 'बीजाभ्यां नमः' इस मन्त्र से दोनों प्रमाष्ठों में 'पितृभ्यां नमः' इस मन्त्र से अधोभाग में 'उमेशा मयां नमः' इस मन्त्र से उपरी भाग में और 'भीमाय नमः' इस मन्त्र से पीठ पर और सिर के पीछे भस्म लगावे।

शिव के आठ रूप

(शर्व, भव, रुद्र, भीम, पशुपति, ईशान और महादेव के आठ रूपों का वर्णन।)

लोक में सब कार्यों को पूर्ण करने वाले शिवजी के अवतारों को सुनो। शिवजी की शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, पशुपति, ईशान और महादेव ये आठ मूर्तियां सूत्र में मणियों के समान पिरोई हुई हैं और भूमि, जल, अग्नि, पवन, आकाश, क्षेत्रज्ञ, सूर्य और चन्द्र में क्रमशः अधिष्ठित हैं। शास्त्रों का कहना है कि शंकर, महेश, विशम्भर के रूप में इसी प्रकार चराचर जगत् को धारण कर रहे हैं। इसी प्रकार परमात्मा शिवजी भव रूप जलात्मक है जो संसार को

जिलाने वाला है वह शिव का उग्र स्वरूप है । शिव जी का एक आकाशात्मक भीमरूप है, जिससे राज समुदाय का भेदन होता है । यह सब आत्माओं का अधिष्ठाता है फिर पशुपति नामक शिव का जो रूप है, वह समस्त पशु जीवों का पाश काटने वाला है तथा जो शिवजी का ईशान नामक रूप है वह सूर्यात्म होकर संसार को प्रकाश देने वाला है और जो आकाश में प्रसारित है । महादेव नामक जो शिवजी का रूप है वह अमृत किरणो वाला संसार का तृप्ति कर्ता है । आठवां मूर्त अमूर्त सब में व्यापक शिवजी का वह 'आत्मा' नामक रूप है जिससे यह सारा संसार शिव रूप ही है । शिवजी अपनी इन आठ मूर्तियो में संसार में अधिष्ठित हैं । कल्याण के इच्छुक पुरुषो को चाहिये कि वह इनकी सेवा करता रहे तथा सर्वभाव से उनका भजन करता रहे ।

महाशिवरात्री व्रत-कथा

जिस दिन अर्धरात्रि में चर्तुदशी पड़ती हो उसी दिन शिवरात्रि का व्रत करना चाहिए । यदि शिव-रात्रि के दिन रविवार या सोमवार पड़े तो महान फलदायक माना गया ।

व्रत-विधान

त्रयोदशी के दिन एक समय आहार ग्रहण करके चर्तुदशी के दिन व्रत करना चाहिये । उस दिन सायं-काल या रात्रि में काले तिलों से स्नान करना चाहिये शिवजी के निमित्त मदार, कनेर, मौलसिरी और बिल्वपत्र अर्पण करना चाहिये । बेलपत्र की महिमा अत्यधिक है । बिल्वपत्र चढ़ाते समय सभी उल्टा कर के चढ़ाना चाहिये ।

शिवरात्रि का पर्व शिशिर ऋतु अर्थात् फाल्गुन मास में मनाया जाता है । कृष्णपक्ष में चन्द्रमा की कलायें क्षीण हो जाती हैं और अन्धकार का साम्राज्य

छा जाता है। उस अन्धकार के निवारणार्थ शिव के संहारकारी स्वरूप की आराधना करनी चाहिये अर्थात मनुष्यों के मोह ग्रस्त होकर अन्धकार में पड़ जाने पर प्रकाश के अवलोकनार्थ शिव की पूजा करनी चाहिये। क्योंकि, शिवरूप कल्याणकारी और रुद्ररूप संहारकारी होता है।

पूजन-सामग्री

शिव-पूजन में प्रायः भयंकर वस्तुयें ही गृहीत होती हैं, जैसे धतूरा, भांग, मदार आदि। आभूषण-रूप में रुद्राक्ष की मालायें आदि अर्पण करने का विधान है। बिल्वपत्र भेदक होने के कारण ही शिवजी की परम प्रिय पत्र माना जाता है।

व्रत-कथा

सूतजी ने कहा—विविध धातुओं से विचित्र वर्ण-वाला, अनेक वृक्षों से व्याप्त, विविध पुष्पों से सुशोभित, वालसूर्य के समान देदीप्यमान, तप्त स्वर्ण के सदृश कान्तिवान, मणिनिर्मित सोपाणों से युक्त कैलाश

पर्वत के एक शिखर की चट्टान पर अत्यन्त शान्त भाव से भगवान शिवजी विराज मान थे। उनके हाथों में शूल, अंग में भस्म और सर्प शोभित हो रहे थे। उन्हें प्रथम आदि गणोंने घेर रखा था और वे क्रीडा में तल्लीन थे। ऐसा उपयुक्त समय देख कर उनसे पार्वतीजी ने पूछा—हे देवाधिदेव, आप सभी व्रतों में उत्तम व्रत का वर्णन करें। वैसे तो मैंने अनेक व्रत, दान एवं तप पूर्ण किये हैं परन्तु फिर भी मेरा सन्देह दूर नहीं हुआ है। आपसे आज मैं ऐसे व्रत को सुनना चाहती हूं, जो सभी व्रतों में श्रेष्ठ एवं मोक्ष-दायक हो।

शिवजी ने कहा—हे देवि! मैं तुम्हें सभी व्रतों में उत्तम एक गुप्त व्रत सुनाता हूं। मैंने आज तक किसी से इस व्रत को नहीं कहा है। इस व्रत के प्रभाव से यमराज भी निकट आने का साहस नहीं करते हैं।

फाल्गुन मास के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को शिव-रात्रि नाम से जाना जाता है। इस दिन का किया हुआ व्रत इतना प्रभावशाली होता है कि प्राणी यम-लोक को त्याग कर शिवलोक में प्रवेश पाता है।

किसी समय म्लेछ देश में एक जीवहिंसक भील रहा करता था। जीवहिंसक के निमित्त वह सदा बनों एवं पहाड़ों के निकट भ्रमण किया करता था। उस का शरीर पीन एवं काला था। वह हाथों में धनुष धारण करता, काला जामा पहनता तथा हाथ में गोह के चमड़े का मौजा बांधता था। कमर में तरकस रखता था। वह सदा बाघ, चीता, तेदुआ, खरगोश, रीछ आदि पशुओं को मारकर अपने कुटुम्ब का भरण-पोषण किया करता था। अनेक पक्षियों का भी वह बध कर डालता था।

हे देवि ! एक बार चतुर्दशी के दिन वह हाथ में धनुष बाण लेकर गम्भीर जंगल में जा पहुंचा। उसने वहां पहुंचकर हरिणों को खोजना प्रारम्भ किया। हरिणों की खोज में वह भील इधर-उधर की दिशाओं दौड़ने लगा। बहुत प्रतीक्षा करने पर भी जब कोई वन्य पशु न मिला तो वह निराश हो गया। सूर्यास्त होने पर एक तालाब के निकट वह जा बैठा। उसने निश्चय किया कि आज रात्रि में मैं अवश्य ही इस तालाब में जीव मारूंगा। मन में ऐसा दृढ़ निश्चय करके वह तालाब के निकट स्थित एक विल्बवृक्ष के नीचे बैठ गया।

उस विल्बवृक्ष के कोटर में एक बहुत विशाल शिवलिंग पड़ा हुआ था। उस व्याध ने अपने दाहिने हाथ से बेलपत्र तोड़कर शिव पर चढ़ा दिया। लिंग-पूजा के प्रभाव से कोई भी हरिण उसके हाथ न आ सका। इस प्रकार उस विल्बवृक्ष के नीचे रात्रि का पहला प्रहर व्यतीत हो गया।

इसके बाद उस तालाब पर एक गर्भिणी हरिणी पानी पीने के लिये आयी। वह हरिणी चकित दृष्टि से चारों ओर देख रही थी। इसी बीच शिकारी ने भी उसे देख लिया। उसने अपने धनुष पर बाण चढ़ाया और साथ ही बेलपत्र तोड़कर भी शिवजी पर चढ़ा दिया। हरिणी ने भी उस शिकारी को देख लिया। हरिणी ने उस व्याध से कहा—हे महाव्याध जरा रुक जाइये। तुम मुझे क्यों मार रहे हो? व्याध ने कहा मेरा परिवार भूख से पीड़ित है। मैं तुम्हारे द्वारा उन सबों की भूख शान्त करूंगा।

शिवजी ने कहा—हे देवि! एक प्रहर की पूजा के प्रभाव से उस व्याध का चतुर्थांश पाप दूर हो गया। उसने अपने बाणों को थोड़ा समेट लिया और उस हरिणी से कहने लग—मैंने अनेक जीवों को

मारा है, किन्तु आज तक किसी वन्य पशु को बोलते नहीं सुना । मुझे तुम्हारी बातों से बड़ा कुतूहल हो रहा है । तुम किस वंश ने उत्पन्न हुई हो और कहां से आयी हो ?

हरिणी ने उस व्याध से कहा—हे व्याध ! मैं पूर्वजन्म में रम्भा नामक इन्द्रपुरी की अप्सरा थी । अत्यन्त सुन्दरी होने का मेरे मन में बड़ा गर्व था । मैंने अपनी सुन्दरता के बल से महादानव हिरण्याक्ष को भी अपना पति बना लिया मैंने उसके साथ कालत भोग किया । दूसरे दिन जब मैं उसके साथ खेल रही थी तभी शिवजी के सम्मुख ताण्डव नृत्य प्रारम्भ हुआ । मेरे शिवजी के सामने पहुंचते ही शिवजी ने मुझसे पूछा—सच-सच बता तू कहां थी, नहीं तो मैं तुझे शाप देता हूं । शाप की बात सुनकर मैंने कहा—हे देव ! मैं घर पर एक दानव क साथ विहार कर रही थी । शिवजी मेरी बातों से क्रुद्ध हुए और बोले—तेरा प्रेमी हिरण्याक्ष हरिण बनेगा और तू उसकी पत्नी । तू बारह वर्ष से कुछ अधिक ही सुख से रहित रहेगी और पारस्परिक शोक के कारण ही तुम्हारे शाप का अन्त होगा । जिस समय

तेरे सामने व्याध आयेगा तब तुम्हें पूर्वजन्म का स्मरण होगा और तू अपने स्वरूप को प्राप्त हो जायेगी।

हरिणी ने उस व्याध से कहा—शिवजी के शाप से मैं इस पृथ्वी पर हरिणी होकर घूम रही हूं। मैं इस समय गर्भिणी हूं, अतः मुझे मत मारो। इसी रास्ते से एक दूसरी हरिणी आ रही है, तुम उसे मारकर अपने कुटुम्ब का भरण-पोषण करना। मैं प्रसव करने के बाद कल आके पास आ जाऊंगी, ऐसा मैं शपथ पूर्वक कहती हूं।

शिवजी ने कहा उस हरिणी की बात से वह व्याध असमंजस में पड़ गया। फिर कुछ सोच कर उसने दूसरे दिन आने का वचन लेकर उसे छोड़ दिया। उस हरिणी ने व्याध के पास पुनः आने के लिये शपथ पूर्वक निम्नलिखित वचन कहे—

हे व्याध! जो द्विज वेदभ्रष्ट होकर सन्ध्या-पासन आदि कर्मों से रहित हो, दानी के बीच में विघ्न डालनेवाला हो, जो दीपक से दीपक जलाता अथवा पैर पर पैर धोता हो, जो अपने स्वामी, मित्र,

बालक, ब्राह्मण आदि का वध करता हो, जो सपत्नियों में द्वेष रखता हो, जो कृषक एक ही हल में तीन बैलों को चलाता हो, जो वेद-निन्दक हो, जो कुटुम्ब का पालन-पोषण न करता हो, जो माता-पिता में श्रद्धा न रखता हो, जो परस्त्रीगामी हो—इन सभी हातकों की भागिनी मैं बनूं, यदि अपनी प्रतिज्ञा पूरी न करूं।

दूसरा पहर आने पर वह व्याध 'शिव-शिव' का उच्चारण करता रहा। उसे नींद नहीं आ रही थी। इसी बीच तालाब पर दूसरी हरिणी आयी। शिकारी ने उस हरिणी को देखकर भी शिवजी पर बेलपत्र चढ़ा दिया। तदनन्तर उस शिकारी ने धनुष पर बाण चढ़ा लिया। हरिणी ने शिकारी से पूछा—हे धनुषधारी, मैं जानना चाहती हुं कि इस रास्ते से एक गर्भिणी हरिणी आई थी अथवा नहीं। आप सच-सच बतावें।

शिवजी ने कहा—उस हरिणी की बात सुनकर शिकारी चकित हो गया। उसकी बोली भी पहली हरिणी जैसी ही लगती थी। शिकारी ने कहा कि पहली हरिणी घर चली गई है। अब मैं तूझे मार कर अपनी भूख मिटाऊंगा।

हरिणी ने कहा कि मैं इस समय कामातुरा हुं, विरहानल से तप्त हूं। तुम मुझे छोड़ दो। इसी रास्ते एक मृग आने वाला है। उसके द्वारा तुम्हारी तृप्ति हो सकती हैं।

शिवजी ने कहा—उस व्याध ने हरिणी से शपथ लेने के लिये कहा। उस हरिणी ने भी पहली हरिणी की भांति ही शपथ किया और वह शिकारी के चंगुल से मुक्त हो गई।

वह हरिणी जल पीकर पलायित हो गई। व्याध उसी पेड़ के नीचे बैठा रहा। उसका तीसरा पहर भी समाप्त हो गया। उसने बेलपत्र तोड़ कर शिवजी पर डाल दिये।

इसके अनन्तर उस व्याध ने एक विशालाक्ष हरिण को देखा। वह अत्यन्त हृष्ट-पुष्ट और सुडौल आकार वाला था। उसको मारने के लिये व्याध ने धनुष पर बाण चढ़ा लिया। उधर उस शिकारी को हरिण ने भी देख लिया। वह अपने मन में सोचने लगा—आज मेरी मृत्यु अवश्य ही होगी। मेरी दोनों हरिणियों को इस व्याध ने अवश्य ही मार डाला

होगा स्त्री के बिना जीवन व्यर्थ है, क्योंकि पत्नी बिना धर्मानुष्ठान नहीं हो सकता और न तो सांसारिक सुख भोग ही किया जा सकता है। अतः उसने व्याध से पूछा—हे नरश्रेष्ठ ! मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूं, कृपया आप उसका ठीक-ठीक उत्तर दें। इसी मार्ग से पहले दो हरिणियां आ चुकी हैं, तो क्या आपने उन दोनों को मार डाला या वे अपने घर चली गई ?

हरिण की बात सुनकर व्याध ने मन में सोचा—यह कोई सामान्य हरिण नहीं हो सकता। ऐसा सोच कर उसने विस्मित होकर हरिण से पूछा—वे दोनों हरिणियां अपने घर चली गई हैं किन्तु तुम्हारी दूसरी रजस्वला स्त्री ने तुम्हें मुझे देने का वचन दिया है। अतः मैं तुझे किसी प्रकार भी नहीं छोड़ सकता।

शिवजी ने कहा—व्याध की बात से वह हरिण भयभीत होकर उससे पूछने लगा—तुमने दोनों हरिणियों को क्यों छोड़ दिया ?

शिवजी ने कहा—व्याध के सम्मुख हरिणियों द्वारा किये हुए शपथ को उस हरिण से व्याध ने कह

सुनाया। मृग प्रसन्न होकर बोल उठा—हे व्याध ! मेरी हरिणियों ने तुमसे जो शपथ किये हैं, उन्हें मैं भी दुहराता हूं। अतः तुम मुझे यहां मत मारो। मैं अपनी ऋतुमती स्त्री से संभोग कर तुम्हारे घर पर निःसन्देह आ जाऊंगा।

शिवजी ने कहा—उस मृग की बात सुन कर व्याध कहने लगा—तू मुझे बातों में फंसा कर धोखा देना चाहता है। अतः मैं तुझे कदापि नहीं छोड़ सकता। उसकी बात सुनकर मृग ने अपनी पत्नियों द्वारा प्रदत्त वचन को व्याध के सम्मुख पुनः दोहराया और कहा कि यदि मैं तुम्हारे पास न आऊं तो मेरा सत्य नष्ट हो जाये।

शिवजी ने कहा—अब तक उस व्याध के सभी कलुष नष्ट हो चुके थे। इसलिये उसने मृग की बातों का विश्वास करके उसे छोड़ दिया। हरिण उस तालाब में जल पीकर जिस रास्ते वहां आया था। पुनः उसी मार्ग से वापस चला गया।

उस समय तक प्रातःकाल हो चुका था। विल्व-वृक्ष के नीचे से बाहर निकलते हुए शिकारी ने अन-

जाने ही वेलपत्र तोड़ कर शिवलिंग पर डाल दिये। शिव-पूजा के प्रभाव से उस शिकारी के सम्पूर्ण पाप विनष्ट हो चुके थे। भूखा रहने के कारण वह निराशा-भरी दृष्टि से चारों ओर देखने लगा। इतने में ही बच्चों सहित वहां दूसरी हरिणि आ पहुंची, उसने धनुष पर बाण का सन्धान किया। किन्तु इसी बीच आगन्तुक हरिणी बोल उठी—हे धर्मात्मन्! बाण मत छोड़ो। अपने धर्म का पालन करो। क्यों कि मैं सभी प्रकार से अवध्य हूं। शास्त्रों में कहा गया है—

सोते हुये राजा को, मैथुन में रत प्राणी को स्तन पान कर रहे बच्चे को, रोगी को, और बच्चों से युक्त हरिणी को नहीं मारना चाहिये।

उस हरिणी ने व्याध से कहा कि यदि तुम मुझे मारना ही चाहते हो तो मैं अपने बच्चों को घर छोड़ आऊं तब मारना। यदि मैं न आऊं तो उसी पाप की भागिनी बनूं जिससे स्त्रियां स्वपति को त्याग कर पर-पुरुष में आसक्त होने पर बनती है।

शिवजी ने कहा—व्याध से मुक्त होकर वह हरिणी अपने बच्चों को लेकर घर चली गई। इधर व्याध

भी अपने घर के लिये तेजी से चल पड़ा। घर पहुंचते ही उसके भूखे बच्चों ने उसे घेर लिया। उसके घर में न ता मांस न था न अन्न ही। सभी बच्चे निराश हो गये। शिकारी अबने मन में बार-बार उन हरिणों का ही स्मरण कर रहा था। इतने में उसकी पत्नी कहा कि तुमने तो आज रात भर व्रत रखकर सभी लोगों को भूखा ही मार डाला।

पत्नी की बात सुन कर व्याध ने कहा—हे प्रिये! मैं कल रात से भूखा हूं और मुझे नींद भी नहीं आई। कल रात में जो हरिण और हरिणियां मुझे मिली वे अपनी प्रतिज्ञाबद्ध होने के कारण मेरे यहां आवेंगी और तब मैं उनका वध करके परिवार को तृप्त करूंगा।

शिवजी ने कहा—हे देवि! वह हरिण व्याध के पंजे से मुक्त होकर अपनी हरिणियों के पास चला गया। उसकी एक मृगी ने प्रसव किया, दूसरे ने संभोगेच्छा प्रकट की और तीसरी ने अपने बच्चों की रक्षा के लिये प्रार्थना की। हरिण ने ऋतुमती मृगी की इच्छा पूर्ण करके कहा—तुम सब यहीं रहकर बालकों की देखभाल करना। अब मैं व्याध के पास

जा रहा हूं क्योंकि मैंने उसे वचन दे रखा है।

शिवजी ने कहा—मृग की बातों से उसकी पत्नियां भी साथ चलने का आग्रह करने लगी। वे सब बहुत ही दुःखी होकर कह रहीं थी—पिता, भाई, पुत्रादि सभी सीमित वस्तु देते हैं परन्तु पति से अपरिमित वस्तु की प्राप्ति होती है। 'अमित दानि भर्ता वैदेहि'- इसलिये स्त्रियों के लिये पति ही परमगति हे। पति के बिना नारी का जीवन सूना है। अतः मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगी और साथ ही मरूंगी।

शिवजी ने कहा—उस मृग की पत्नी ने विरह कातर होकर मरने का निश्चय किया। परिवार की शोकावस्था से बः मृग बहुत ही दुःखी हुआ। वह सोंचने लगा-यदि मैं वचनबद्ध होकर भी व्याध के पास नहीं जात हूं तो धर्म का नाश होगा और जाने पर कुटुम्ब का अन्त हो जायेगा। वह दुविधा की स्थिति में पड़ गया। अन्त में धैर्य धारण कर उसने व्याध के पास जाना ही उचित समझा। एतदर्थ वह व्याध के आश्रम की ओर चल पड़ा। उसके पीछे-पीछे उसकी पत्नियों न भी उसका अनुगमन किया।

वहां से अपनी स्त्री-पुत्रों को साथ लेकर मृग उस भूखे व्याध के पास आ पहुंचा। मृग ने कहा-हे व्याध! पहले तुम मुझे मारो तत्पश्चात् इन सभी को। तुम्हारे बाणों से मर कर आज हम लोग स्वर्ग जायेंगे और तुम्हें किसी प्रकार का पाप भी नहीं लगेगा।

मृग की बातों से उस व्याध के मन का अज्ञान दूर हो गया। वह बोला—हे मृग! तुम अपने घर लौट जाओ। तुम्हारी सभ्यता से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं। मुझे मांस नहीं चाहिये। तुम मेरे बन्धु, गुरु तथा मित्र हो। मैंने आज से अहिंसा का व्रत ले लिया है और अपने हिंसक शस्त्रों को तोड़कर फेंक दिया हैं। अतः अब तुम निर्भय होकर लौट जाओ।

शिवजी ने कहा—इतना कहकर शिकारी ने धनुष बाण तोड़ डाले और मृग का प्रदक्षिणा करके उसे नमस्कार किया। स्वर्ग में देवों की दुन्दुभि बजने लगी और पुष्प वृष्टि होने लगी। इतने में एक देव-दूत सुन्दर विमान लेकर स्वर्ग से आ उपस्थित हुआ। उसने शिकारी से कहा हे महाव्याध! इस विमान में बैठकर सदेह स्वर्ग को चलो। शिवरात्रि के प्रभाव से तुम्हारे सभी पाप नष्ट हो चुके हैं। शिवरात्रि के

दिन तुमने अनजाने में ही उपवास और जागरण द्वारा शिव की पूजा कर डाली। हे धर्मात्मन् ! तुम्हारा इसी नाम से नक्षत्र मण्डल में स्थाई निवास होगा। इसके बाद उसने उस मृग को सम्बोधित करत कहा- हे मृग ! तुम अपनी स्त्रियों और पुत्रों के साथ इस विमान में बैठ कर स्वर्गारोहण करो। अपनी तीनों भार्याओं सहित नक्षत्र पद प्राप्त करो। तुम्हारे नाम से ही वह नक्षत्र प्रसिद्ध होगा।

शिवजी ने कहा—इतना सुन कर वे सभी विमान में बैठ कर नक्षत्र लोक को गये। आगे दो हरिणियां, पीछे हरिण—इन तीनों ताराओं से युक्त मृग शीर्ष नक्षत्र है। यह नक्षत्र आज भी आकाश में दृष्टिगोचर होता है - इसकी पीठ पर आर्द्रा नामक दूसरा नक्षत्र लगा है।

शिवजी ने कहा—हे पार्वती ! मैंने ऐसे महत्व-पूर्ण शिवरात्रि व्रत का तुमसे वर्णन किया। यह शिव लोक की प्राप्ति करने वाला है। इस व्रत के समान पापनाशक और मोक्षदायक दूसरा व्रत नहीं।

पार्वती जी ने पूछा—हे देव ! यह उत्तम व्रत

किस रीति से किया जाता है ? इसका उद्यापन कैसे करना चासिये ? सिवजी की पूजा किस प्रकार करनी चाहिये ? हे स्वामि ! आप इन सभी बातों का विस्तार पूर्वक वर्णन करें ।

शिवजी ने कहा—फाल्गुन मास के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन प्रातःकाल दातून आदि करने के बाद किसी तीर्थ स्थान या जलाशय में स्नान करें । तत्पश्चात् शिव-मन्दिर में जाकर धूप, दीप, अक्षत पुष्प, विल्वपत्र आदि से मेरी पूजा करे । जो लोग प्रतिमास की चतुर्दशी का व्रत करते हैं उन्हें एक वर्ष के बाद व्रत का उद्यापन करना चाहिये ।

उद्यापन विद्धि

रात्रि के समय द्वादश लिंगों एवं द्वादश कुम्भों से युक्त (लिंगतोभद्र) मण्डल बनाना चाहिये । उस मण्डल को दीप मालाओं से सुशोभित करके उसके बीच में देवमन्त्रों के साथ कलशस्थापन करे । घट को लाल वस्त्र से आच्छादित करके उस पर पंचरत्न रखे । तदनन्तर उस घट पर जल पूर्ण पात्र की स्थापना करनी चाहिये । तत्पश्चात् बावतो सहित शिवजी

की सुवर्ण प्रतिमा को वेदमन्त्रों द्वारा स्नान कराये । प्रतिमा को कलश के मध्य भाग में स्थापित करके षोडशोपचार विधि से शिवजी को पूजा करे । पूजन पश्चात् १०८ विल्वपत्र द्वारा अग्नि में हवन करना चाहिये । फिर तिल, अक्षत, यव आदि वस्तुओं को लेकर दुगुना हवन करे । हवन के अन्त में शतरुद्रा का जप करावे । ऐसा करने से शिवजी अत्यन्त प्रसन्न होते हैं । प्रातःकाल बारह ब्राह्मणों को खीर का भोजन कराना चाहिये । सपत्नीक आचार्य को वस्त्रादि देकर गाय, घृत पात्र, तिल पात्र आदि का दान करे । इसके अतिरिक्त इस शिव-महोत्सव में अंध. पंगु आदि दीनजनों को भी दान देकर सन्तुष्ट करना चाहिये । हे देवि ! जो मनुष्य इस प्रकार से मेरा व्रत और उद्यापन करता है वह अन्त समय में मेरे निकट स्थान पाता है । इसमें कुछ भी संशय नहीं करना चाहिये । शिवरात्रि व्रत के समान फलदायक एवं पापनाशक व्रत इस भूलोक में दूसरा नहीं है । ।

इस प्रकार शिवरात्रि व्रत-कथा समाप्त ।

प्रदोष व्रत-कथा

पूजा-विधि

'प्रदोष व्रत करने वाले को त्रयोदशी के दिन, दिनभर भोजन नहीं करना चाहिये । शाम के समय जब सूर्यास्त में तीन घड़ी का समय शेष रह जाये तब स्नानादि कर्मों से निवृत्त होकर, श्वेत वस्त्र धारण करें । तत्पश्चात् सन्ध्या-वन्दन करने के बाद शिवजी का पूजन प्रारम्भ करे । पूजन के स्थान को स्वच्छ जल तथा गोबर के घोल से लीन कर मण्डप बना लेना चाहिये और उस मण्डप के ऊपर रंगीन चंदवा लगाकर वन्दनवार से सुसज्जित कर देना चाहिये । उस स्थान पर पांच रंगों के मिश्रण से पद्म पुष्प की आकृति बनाकर कुश का आसन बिछाना चाहिये और उस आसन पर पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख होकर बैठ जाना चाहिये । फिर इसके बाद भगवान महेश्वर की स्थापित मूर्ति का ध्यान करना चाहिये ।

मानसिक संकल्प

ध्यान के समय एकाग्र चित्त होकर संकल्प करना

चाहिये। हाथ जोड़ कर मन में देवाधिदेव शंकर का ध्यान करते हुए कहना चाहिये कि हे शंकर जी ! आप सम्पूर्ण पापों के नाश के निमित्त प्रसन्न होइये। शोकरूपी अग्नि में दग्ध, संसार के भय से भयभीत एव अनेक प्रकार के रोगों से अक्रान्त इस अनाथ की आप रक्षा कीजिये। हे स्वामी ! आप देवी पार्वती के सहित पधार कर मेरी पूजा ग्रहण कीजिये।' ऐसा करने के बाद 'ओम गौरी-सहित-शिवाये नमः' इस मन्त्र द्वारा उनका आहवान करना चाहिये।

इसके बाद जल से शिवजी को स्नान करावे। तत्पश्चात् वस्त्र- यज्ञोपवीत, गन्ध, द्रव्य और आभूषण आदि अर्पित करे। पुष्पों में मन्दार, कमल, कनेर, धतूरा और बेलपत्र चढ़ाना चाहिये। धूप, दीप देकर ऋतुफल और खीर का नेवैद्य अथवा शक्कर या गुड़ से युक्त मिष्ठान अर्पित करे। तत्पश्चात् ताम्बूल आदि चढ़ाकर आरती करनी चाहिये। अन्त में ओम नमः शिवाय, ओम नमः शिवाय' मन्त्र का एक हजार जप करना चाहिये। पूजा की समाप्ति के बाद ब्राह्मण को भोजन कराकर यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिये।

व्रत-महात्म्य

इस व्रत के करने से सम्पूर्ण पापों का नाश हो जाता है। यहां तक कि सैकड़ों ब्रह्महत्या का भी पाप नष्ट हो जाता है दरिद्रता दूर हो जाती है रोग से छुटकारा मिलता है। इसके प्रभाव से सभी प्रकार के कष्ट दूर होकर सुख, धन और पुत्र की प्राप्ति होती है। प्रदोष व्रत से विद्यार्थियों को विद्या की तथा विधवाओं को धर्म की प्राप्ति होती है। यह व्रत सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाला है। सुहागिन स्त्रियों को इस व्रत से सौभाग्य सन्तान-सुख की प्राप्ति एवं वृद्धि होतो है। इस व्रत के फल की महिमा सर्वथा अकथनीय है।

व्रत-कथा

शुचिव्रत की कथा (१)

पूर्व काल में एक पुत्रवती ब्राह्मणी थी। उसके दो पुत्र थे। वह ब्राह्मणी बहुत ही निर्धन थी, देवयोग

से उसे एक दिन महर्षि शाण्डिल्य के दर्शन हुए। महर्षि के मुख से प्रदोष व्रत में शिव पूजन की महिमा सुनकर उस ब्राह्मण ने ऋषि से पूजन की विधि पूछी। उसकी श्रद्धा और आग्रह से ऋषि ने उस ब्राह्मणी को शिवपूजन का उपर्युक्त विधान बतलाया और ब्राह्मणी से कहा—'तुम अपने दोनों पुत्रों से शिव की पूजा कराओ। इस व्रत के प्रभाव से तुम्हें एक वर्ष के पश्चात् पूर्ण सिद्धि होगी।

उस ब्राह्मणी ने महर्षि शाण्डिल्य के वचन सुन कर उन बालकों के सहित नतमस्तक होकर मुनि के चरणों में प्रणाम किया और बोली—हे ब्रह्मन्! आज मैं आपके दर्शन से धन्य हो गई हूं। मेरे ये दोनों कुमार आपकी शरण में हैं। यह शुचिव्रत मेरा पुत्र है और यह राजसुत मेरा धर्म पुत्र है। ये दोनों बालक आपके सेवक हैं। आप मेरा उद्धार कीजिये।'

उस ब्राह्मणी को शरणागत जानकर मुनि ने मधुर वचनों द्वारा दोनों कुमारों को शिवजी की आराधना-विधि बताया। तदनन्तर वे दोनों बालक और ब्राह्मणी मुनि को प्रणाम कर शिव के मन्दिर चले गये।

उस दिन से वे दोनों बालक मुनि के कथनानुसार नियमपूर्वक प्रदोष काल में शिवजी की आराधना करने लगे। पूजा करते हुए उन दोनों की चार महीने बीत गये। एक दिन राजसुत की अनुपस्थिति में शुचिव्रत स्नान करने नदी के किनारे चला गया और वहां जल क्रीडा करने लगा। संयोग से उसी समय उसे नदी की दरार में चमकता हुआ धन का बहुत कलश दिखाई पड़ा। उस धनपूरित कलश को देखकर शुचिव्रत बहुत ही प्रसन्न हुआ। उस कलश को सिर पर रखकर घर ले आया।

कलश को भूमि पर रखकर वह अपनी माता से बोला—'हे माता शिवजी की महिमा तो देखो। भगवान ने इस घड़े के रूप में मुझे अपार सम्पत्ति दी है।

उसकी माता घड़े को देखकर आश्चर्य करने लगी और राजसुत को बुलाकर कहा—'बेटे, मेरी बात सुनों। तुम दोनों इस धन को आपस में आधा-आधा बांट लो।'

माता की बात सुन कर शुचिव्रत अत्यन्त प्रसन्न हुआ परन्तु राजसुत ने अपनी असहमति प्रकट करते हुए कहा—'हे मां, यह धन तेरे पुत्र के पुण्य से उसे प्राप्त

हुआ है। मैं इसमें किसी प्रकार का हिस्सा लेना नहीं चाहता। क्योंकि अपने किये हुये कर्म का फल मनुष्य स्वयं ही भोगता है।'

इस प्रकार शिवपूजन करते हुये एक ही घर में उन्हें एक वर्ष व्यतीत हो गया। एक दिन राजकुमार ब्राह्मण के पुत्र के साथ वसन्त ऋतु में बनविहार करने के लिये गया। वे दोनों जब साथ-साथ बहुत दूर निकल गये तो उन्हें वहां सैकड़ों गन्धर्व कन्यायें खेलती हुई दिखाई पड़ीं।

ब्राह्मण कुमार उन गन्धर्व कन्याओं को क्रीड़ा-रत देख कर राजकुमार से बोला—'यहां पर कन्यायें विहार कर रही हैं। इस लिये हम लोगों को अब और आगे नहीं जाना चाहिये। क्योंकि ये गन्धर्व कन्यायें शीघ्र ही मनुष्नों के मन को मोहित कर लेती है इसलिये मैं तो इन कन्याओं से दूर ही रहूंगा।'

परन्तु राजकुमार उसकी बात अनसुनी कर कन्याओं के विहार स्थल में निर्भीक भाव से अकेला ही चला गया। उन सभी गन्धर्व कन्याओं में प्रधान सुन्दरी उस आये हुये राजकुमार को देख कर मन में विचार करने लगी कि कामदेव के बराबर सुन्दर रूप वाला यह राजकुमार कौन है? राजकुमार के साथ

बात-चीत करने के उद्देश्य से उस सुन्दरी ने अपनी सखियों से कहा–सखियों ! तुम लोग निकट के बन में जाकर उस बन से अशोक, चम्पक, मौलसिरी आदि के ताजे फूल तोड़ लाओ। तब तक मैं तुम्हारी प्रतीक्षा में यहीं रुकी रहूंगी।'

उस गन्धर्व कुमारी की बात सुनते ही सब सखियां वहां से चली गई। सखियों के जाने के बाद वह गन्धर्व कन्या उस राजकुमार को स्थिर दृष्टि से देखने लगी। उन दोनों में परस्पर प्रेम का संचार होने लगा। गन्धर्व कन्या ने राजकुमार को बैठने के लिये आसन दिया। प्रेमालाप के कारण राजकुमार के सहवास के लिये वह सुन्दरी व्याकुल हो उठी और राजकुमार से प्रश्न करने लगी–'हे कमल के समान नेत्रों वाले, आप किस देश के रहने वाले हैं ? आपका यहां आना क्योंकर हुआ ?

गन्धर्व कन्या की बात सुनकर राजकुमार ने उत्तर दिया–'मैं विदर्भराज का पुत्र हूं। मेरे माता-पिता स्वर्गबासी हो चुके हैं। शत्रुओं ने मुझसे मेरा राज्य हरण कर लिया है ?

राजकुमार ने अपना परिचय देकर उस गन्धर्व कन्या से पूछा–'आप कौन हैं ? किसकी पुत्रीं हैं ? और इस बन में किस उद्देश्य से आई हैं ? आप मुझ से क्या कहना चाहती हैं ?

राजकुमार की बात सुन कर गन्धर्व-कन्या ने कहा–मैं विद्रविक नामक गन्धर्व की पुत्री अंशुमती हूं। मैं आपको देखकर आपसे बात-चीत करने के लिये ही यहां पर सखियों का साथ छोड़कर रह गई हूं । मैं विद्या में बहुत ही निपुण हूं मेरे गान पर सभी देवांग-नायें रीझ जाती हैं। मैं चाहती हूं कि आपका और मेरा प्रेम सर्वदा बना रहे ।

इतनी बात कहकर उस गन्धर्व कन्या ने अपने गले का बहुमूल्य मुक्ताहार राजकुमार के गले में डाल दिया । वह हार उन दोनों के प्रेम का प्रतीक बन गया ।

इसके पश्चात् राजकुमार ने उस कन्या से कहा–'हे सुन्दरी, तुमने जो कुछ कहा है, वह सब सत्य है । लेकिन आप राजविहीन राजकुमार के पास कैसे रह सकेगीं ? आप अपने पिता की अनुमति लिये बिना

मेरे साथ कैसे चल सकेंगी ?

राजकुमार की बात पर मुसकरा कर वह कन्या कहने लग—'जो कुछ भी हो, मैं अपनी इच्छा से ही आपका वरण करूंगी । अब आप परसों प्रातःकाल यहां पर आइयेगा । मेरी बात कभी झूठी नहीं हो सकती ।'

गन्धर्व कन्या ऐसा कहकर पुनः अपनी सखियों के पास चली गई । इधर वह राजकुमार भी शुचिव्रत के पास जा पहुंचा और उसने अपना सारा वृतान्त कह सुनाया । इसके बाद वे दोनों घर को लौट गये । घर पहुंच कर उन लोगों ने ब्राह्मणी से सब हाल कहा, जिसे सुनकर वह ब्राह्मणी भी हर्षित हुई ।

गन्धर्व कन्या द्वारा निश्चित दिन को वह राज कुमार शुचिव्रत के साथ उसी बन में जा पहुचा । वहां पहुंच कर उन लोगों ने देखा-गन्धर्व राज अपनी पुत्री अंशुमती के साथ उपस्थित होकर प्रतीक्षा में बैठे थे ।

गन्धर्वराज ने उन दोनों कुमारों का अभिनन्दन करके उन्हें सुन्दर आसन पर बिठाया । और राज

कुमार से कहा—'मैं परसों कैलाशपुरी को गया था। वहां पर भगवात् शंकर पार्वती के साथ विराजमान थे। उन्होंने मुझे अपने पास बुलाकर कहा—'पृथ्वी पर राज्यच्युत होकर धर्मगुप्त नामक राजकुमार घूम रहा है। शत्रुओं ने उसके वंशको नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। वह कुमार सदा ही भक्तिपूर्वक मेरी सेवा किया करता है। इसलिये तुम उसकी सहायता करो, जिससे वह अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सके। इसलिये मैं भगवान् शिव की आज्ञा से अपनी पुत्री अंशुमती आप को सौंपता हूं। मैं शत्रुओं के हाथ में गये हुए आपके राज्य को वापस दिला दूंगा। आप इस कन्या के साथ दस वर्षों तक सुख भोगकर शिवलोक को चले जायेगें। शिवलोक में जाने पर भी मेरी पुत्री इसी शरीर से आपके साथ रहेगी।' इतना कहकर गन्धर्वराज ने अपनी पुत्री का विवाह राजकुमार के साथ कर दिया। दहेंज में अनेकों बहुमूल्य रत्न, वस्त्र, रथ आदि प्रदान किये। इसके अतिरिक्त दास-दासियां तथा शत्रुओं पर विजय पाने के लिये गन्धर्वों की चतुरंगी सेना भी दी।

राजकुमार गन्धर्वों की सहायता से शत्रुओं को नष्ट कर दिया और वह अपने नगर में प्रविष्ट हुआ। मन्त्रियों ने राजकुमार को सिंहासन पर बैठा कर

राज्याभिषेक किया अब वह राजकुमार राज-सुख भोगने लगा। जिस दरिद्र ब्राह्मणी ने इसका पालन-पोषण किया था। उसे ही राजमाता के पद आसीन किया था। वह शुचिव्रत हो उसका छोटा भाई बना। इस प्रकार प्रदोष व्रत में शिव-पूजन के प्रभाव से वह राजकुमार दुर्लभ पद को प्राप्त हुआ।

जो मनुष्य प्रदोषकाल में या नित्य ही इस कथा को श्रवण करता है। वह निश्चय ही सभी कष्टों से मुक्त हो जाता है और अन्त में वह परमपद का अधिकारी बनता है।

व्रत-उद्यापन विधि

उद्यापन करने से एक दिन पूर्व गणेश-पूजन करने के बाद घर में अथवा किसी देवालय में बैठकर नृत्य-गीतादि द्वारा रात भर जागरण करें। दूसरे दिन प्रातः स्नानादि कार्य से निवृत्त होकर रंगीन बस्त्रों से मण्डप बनावे। फिर उसी मण्डप में शिव-पार्वती की प्रतिमा स्थापित करके बिधिवत् पूजन करें। तदनन्तर शिन-पार्वती के उद्देश्य से खीर से अग्नि में हवन करना चाहिये। हवन करते समय 'ओम उमासहित

शिवाये नमः' मन्त्र से १०८ बार आहूति देनी चाहिये इसी प्रकार 'ओम नमः शिवाय' के उच्चारण से शंकर के निमित्त आहूति प्रदान करें । हवन के अन्त में किसी धार्मिक पत्नीवान आचार्य को वस्त्र, अलंकार तथा दुधारू गाय दान में देवे । ऐसा करने के बाद ब्राह्मणों को भोजन दक्षिणा से सन्तुष्ट करना चाहिये । 'व्रत पूर्ण हो' ऐसा वाक्य ब्राह्मणों द्वारा कहलवाना चाहिये । ब्राह्मणों की आज्ञा पाकर बन्धु-बान्धवों को साथ में लेकर मन में भगवान शंकर का स्मरण करते हुए व्रती पुत्र, पौत्रादि से युक्त होता तथा आरोग्य लाभ करता है । इसके अतिरिक्त वह अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता एवं सम्पूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है । ऐसा स्कन्द पुराण में कहा गया है ।

इस प्रकार प्रदोष व्रत-कथा समाप्त

आरती शिवजी की

जय शिव ओंकारा हर शिव ओंकार
ब्रह्मा विष्णु सदा शिव अर्धांगी धारा
— एकानन चतुरानन पंचानन राजे —
हंसानन गरूडासन वृषावाहन साजे ।। जै० ।।
दो भुज चार चर्तुभुज दस मुख ते सोहे ।
तीनों रूप निरखता त्रिभुवन जग मोहे ।। जै० ।।
अक्षमाला बन माला रुण्डमाला धारी ।
चन्दन मृगपद सो है भोले शशिधारी ।। जै० ।।
श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे ।
सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संग ।। जै० ।।
कर में श्रेष्ट कमण्डल चक्र त्रिशूल धर्ता ।
जगकर्ता जगहर्ता जग पालन कर्ता ।। जै० ।।
ब्रह्मा विष्णु सदा शिव जानत अविवेका ।
प्रणवक्षार के मध्य वह तीनों एका ।। जै० ।।
त्रयगुण शिव की आरती जो कोई गावे ।
कहत शिवानन्द स्वामी मनवांछित फल पावे ।।